IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

राजस्थान में नवपाषाण काल से प्रारंभिक ऐतिहासिक काल तक के संक्रमण में ताम्रपाषाण स्थलों की भूमिका

आकांक्षा मिश्रा
शोधार्थी
महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर

Abstract: मानव सभ्यता के विकास में नवपाषाण काल से प्रारंभिक ऐतिहासिक काल तक का संक्रमण एक निर्णायक चरण रहा है, जिसमें तकनीकी, सामाजिक, और आर्थिक परिवर्तनों ने जटिल समाजों की नींव रखी। यह शोध पत्र राजस्थान के ताम्रपाषाण स्थलों की भूमिका का विश्लेषण करता है, जो इस संक्रमण प्रक्रिया में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। नवपाषाण काल (लगभग 10,000 ईसा पूर्व से 5,000 ईसा पूर्व) में स्थायी बस्तियों, कृषि, और पशुपालन की शुरुआत हुई, जिसने ताम्रपाषाण काल (लगभग 3,500 ईसा पूर्व से 2,000 ईसा पूर्व) के लिए आधार तैयार किया। ताम्रपाषाण काल में पत्थर के साथ-साथ तांबे के औजारों का उपयोग शुरू हुआ, जो धातु विज्ञान और व्यापारिक नेटवर्क के विकास का प्रतीक है। राजस्थान के प्रमुख ताम्रपाषाण स्थल जैसे गणेश्वर, आहड़, गिलुंड, और बालाथल इस काल के सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों को दर्शाते हैं। गणेश्वर में तांबे के औजारों और पूर्व-हड़प्पा संस्कृति से संबंध, आहड़ में प्रारंभिक शहरीकरण के संकेत, गिलुंड में मिट्टी के बर्तनों की विविधता, और बालाथल में कृषि आधारित जीवनशैली इन स्थलों की विविध भूमिकाओं को उजागर करते हैं। ये स्थल प्राकृतिक संसाधनों, विशेष रूप से अरावली पर्वतमाला से तांबे के खनन, और सिंधु घाटी सभ्यता जैसे समकालीन संस्कृतियों के साथ संपर्क का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। यह पत्र तर्क देता है कि ताम्रपाषाण स्थलों ने न केवल तकनीकी प्रगति को बढ़ावा दिया, बल्कि सामुदायिक संगठन और व्यापार के माध्यम से प्रारंभिक ऐतिहासिक काल की ओर संक्रमण को सुगम बनाया। राजस्थान की भौगोलिक स्थिति ने इन विकासों को समर्थन प्रदान किया, जिससे यह क्षेत्र प्रागैतिहासिक से ऐतिहासिक सभ्यताओं के अध्ययन के लिए एक महत्वपूर्ण केंद्र बन गया। इस शोध के माध्यम से, ताम्रपाषाण काल को नवपाषाण और प्रारंभिक ऐतिहासिक काल के बीच एक सेतु के रूप में स्थापित किया गया है, जो मानव सभ्यता के क्रमिक विकास को समझने में सहायक है।

Index Terms - नवपाषाण काल, ताम्रपाषाण काल, राजस्थान, धातु विज्ञान, व्यापारिक नेटवर्क

प्रस्तावना

मानव सभ्यता के विकास में प्रागैतिहासिक काल से धातु युग तक का संक्रमण एक महत्वपूर्ण चरण रहा है। सांस्कृतिक प्रगति के इस उषाकाल में भारत के सन्दर्भ में, राजस्थान एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ प्रागैतिहासिक काल से ऐतिहासिक काल तक की सभ्यताओं के प्रमाण प्रचुर मात्रा में मिले है। राजस्थान में प्राचीन पाषाण युग के मानव में मौलिक संस्कृति के आधार आवश्यक परिलक्षित होते है। स्पष्टतः उसने शिकार करने या कंद मूल एकत्रित करने में बुद्धि का प्रयोग किया। स्वयं की सुरक्षा हेतु शिला–कुटीरों का प्रयोग इस बात का प्रमाण है कि उसमें विवेक के बीज भी अंकुरित हो गये थे। कौनसे पशुओं का शिकार करना, कौनसे कंद मूल का सेवन करना, एक स्थान से दूसरे स्थान क्यों और कैसे जाना ये सभी प्रक्रियाएँ उसमें बुद्धि बल के प्रमाण है। प्रारम्भिक

पाषाणकालीन मानव चित्रकला से भी परिचित था। राजस्थान के भरतपुर जिले 'दर' नामक स्थान से कुछ शिला कुटीरों में व्याघृ, बारहसिंघा तथा कुछ मानव आकृतियाँ पायी गयी है। जो अनुमानतः पूर्व पाषाण युग के अन्तिम चरण से नवीन पाषाण युग की है। ये सभी गतिविधियाँ कम से कम इस बात का प्रमाण है कि राजस्थान के पूर्व प्रस्तर युग के मानव आर्थिक व सामाजिक तथा तकनीकी जीवन के प्रारूप के निर्माता थे।

राजस्थान में मानव विकास की दूसरी सीढ़ी का क्रम मध्य पाषाण काल तथा नवीन पाषाण काल का है। कई वर्षो के अनुभव के पश्चात् पत्थर के औजार परिष्कृत, उन्नत, ओपदार, तीखे, धारदार व आकार में छोटे बनने लगे। इस युग के मानव का विकास केवल शिकार के उपकरणों तक ही सीमित नही रहा, बल्कि यह विस्तार कृषि सम्बन्धि औजारों में भी देखा गया है। नवीन पाषाण युग का पशु–पालन तथा कृषि कार्य की और भी अग्रसर हो गया था। पशुपालन, कृषि तथा बस्ती बनाकर रहने की आदत ने संस्कृति के पथ को स्थिरता प्रदान की। अतः नवीन पाषाण युग राजस्थान की संस्कृति के इतिहास में अत्यधिक महत्व रखता है।

नवीन पाषाण युग में कई हजार वर्षो तक उक्त प्रकार का जीवन बिताते हुए मनुष्य धीरे–धीरे धातुओं के बारें में जानने लगा। ऐसा आभास होता है कि नवीन पाषाण काल का मानव आग का उपयोग भोजन बनाने, मिट्टी के बर्तन पकाने तथा पत्थर की बनी भट्टियों को तपाने में करने लगा, अतः उसने पत्थर में मिली धातुओं को पिघलते देखा। वह इससे अनुमान लगा सका कि पिघली हुई धातु पीट कर कई प्रकार के उपकरणों को अभीष्ट आकार में लाया जा सकता है। इसी के परिणाम स्वरूप तामृपाषाण काल का उद्भव हुआ जो पत्थर एवं तांबे के औजारों पर आधारित थी।

ताम्रपाषाण काल का उद्भव नवपाषाण काल के बाद कांस्य युग से पहले हुआ था, अतः यह काल 'नवपाषाण व कांस्य युग के बीच का संक्रमण काल' कहलाता है। यह काल लगभग 3500 ईसा पूर्व से 2000 ई. पूर्व पत्थर के साथ–साथ तांबे के औजारों के उपयोग की शुरूआत को दर्शाता है। यह काल प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल की नींव रखता है जिसमें लिखित साक्ष्य तथा संगठित सामाजिक व्यवस्था के संकेत मिलते है।

राजस्थान में ताम्रपाषाण स्थलों की भूमिका के सन्दर्भ में विशेष रूप से उल्लेखनीय है, क्योंकि यह क्षेत्र नवपाषाण काल की स्थायी जीवन शैली से प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल की जटिल सभ्यताओं तक के विकास का साक्षी रहा है। इस शोधपत्र का उद्देश्य राजस्थान के प्रमुख ताम्रपाषाण स्थलों जैसे गणेश्वर, आहाड़, गिलूण्ड तथा बालाथल के योगदान का विश्लेषण करना है जो इस संक्रमण काल में सामाजिक, आर्थिक और तकनीकी परिवर्तनों को दर्शाते है।

यह शोध पत्र 4 मुख्य खण्डों में विभाजित है –

1. नवपाषाण काल का परिचय,
2. ताम्रपाषाण काल की विशेषताएँ तथा राजस्थान के प्रमुख स्थल,
3. प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल की और संक्रमण,
4. निष्कर्ष।

नवपाषाण काल का परिचय

नवपाषाण काल मानव सभ्यता के विकास का वह चरण है जिसमें शिकार तथा संग्रहण पर आधारित जीवनशैली से स्थायी बस्तियों तथा कृषि आधारित जीवन की और परिवर्तन हुआ। शताब्दियों के अनुभव के बाद पत्थर के औजार परिकष्कृत, उन्नत, तीखे तथा धारदार बनने गले। ये औजार अर्द्ध–चन्द्रकार, त्रिभुजाकार तथा अन्य ज्यामिति के आकारों के अनुरूप होते थे। इन उपकरणों की उपलब्धि पश्चिमी राजस्थान में लूनी तथा उसकी सहायक नदियों की घाटियों व दक्षिणी–पूर्वी राजस्थान में चित्तौड जिले में बेड़च नदी घाटी में प्रचुर मात्रा में हुई।

राजस्थान में इस काल के साक्ष्य बागोर (भीलवाडा) और तिलवाडा (बाडमेर) जैसे स्थलोंसे प्राप्त हुए है। बागोर, जो बनास नदी के किनारे स्थित है, भारत में पशुपालन के प्राचीनतम साक्ष्यों में से एक है। यहां से प्राप्त लघुपाषाण उपकरण (माइक्रोलिथिक उपकरण) तथा पशुओं की हड्डियाँ यह संकेत देती है कि लगभग 7000 ईसा पूर्व तक मानव समुदाय स्थायी जीवन की और बढ रहे थे। राजस्थान की भौगोलिक स्थिति जिसमें अरावली पर्वतमाला, थार मरूस्थल और बनास–चम्बल जैसी नदियाँ शामिल है, ने नवपाषाण कालीन समुदायों को प्राकृतिक संसाधनों का लाभ उठाने में सहायता प्रदान की। यह नूतन प्रस्तर युग राजस्थान की संस्कृति के इतिहास में बहुत अधिक महत्व रखता है। कृषि, पशुपालन, बुनाई तथा बस्ती बनाकर रहने की आदत ने संस्कृति के पथ को स्थिरता प्रदान की। इस काल में मानव ने पहिया, मिट्टी के बर्तन तथा प्रारम्भिक कृषि तकनीको का विकास किया। हालांकि, यह काल पूर्णतः पत्थर के औजारों पर निर्भर था तथा धातु का उपयोग अभी शुरू नही हुआ था। नवपाषाण काल ने ताम्रपाषाण काल के लिये आधार तैयार किया, क्योंकि स्थायी बस्तियों तथा सामुदायिक जीवन ने तकनीकी प्रगति की मांग को बढाया। नवपाषाण काल का मानव पूर्व पाषाण युग के मानव से सभ्यता व संस्कृति के क्षेत्र में बहुत अधिक आगे बढ़ गया था।

ताम्रपाषाण काल की विशेषताएँ और राजस्थान क प्रमुख स्थल :–

ताम्रपाषाण काल नवपाषाण और कांस्य युग के बीच का एक मध्यवर्ती चरण है, जिसमें पत्थर के साथ–साथ तांबे के औजारों का उपयोग शुरू हुआ। यह काल तकनीकी नवाचारों, सामाजिक संगठन तथा व्यापारिक नेटवर्क के विकास का प्रतीक है।

1. ताम्रपाषाण संस्कृति में लोग मुख्यतः ग्रामीण लोग थे।
2. वे पहाड़ियों एवं नदियों के आस–पास रहते थे।
3. ताम्रपाषाण कालीन लोग पकी ईंटों का (अपवाद–गिलूण्ड) प्रयोग नहीं करते थे।
4. इस काल में लोग वस्त्र बनाना, मृण्ममिर्तयाँ बनाना, ताम्र औजार तथा मृदभाण्ड बनाने जैसी कलाओं में निपुण हो गये थे।
5. ताम्रपाषाणीय लोग लेखन कला से अनभिज्ञ थे।
6. सबसे पहले ताम्रपाषाण काल के लोगों ने ही प्रायद्वीपीय भारत में बड़े–बड़े गाँव बसाये।

राजस्थान में ताम्रपाषाण स्थल दक्षिण–पूर्वी क्षेत्र में केन्द्रित है, विशेष रूप से बनास घाटी तथा अरावली क्षेत्र, इन स्थलों में गणेश्वर, आहाड, गिलूण्ड तथा बालाथल प्रमुख है।

- **गणेश्वर :–**

गणेश्वर उत्तरी राजस्थान के सीकर जिले के नीमकाथाना क्षेत्र में कांतली नदी किनारे स्थित है। गणेश्वर में उत्खनन का कार्य रत्नचन्द्र अग्रवाल ने 1977 ई. में किया था। यह स्थल लगभग 2800 ई.पूर्व का माना जाता है और इसे पूर्व हड़प्पा संस्कृति से जोड़ा जाता है।

यहां से तांबे के तीरों के सिरे, भाले, मछली पकडने के हुक, चूडिया और छेनी जैसे औजार प्राप्त हुए है। गणेश्वर की खोज ने यह सिद्ध किया कि ताम्रपाषाण समुदाय धातु–विज्ञान में कुशल थे तथा सम्भवतः तांबे का खनन स्थानीय अरावली पहाडियों से करते थे। यह स्थल व्यापारिक नेटवर्क का भी संकेत देता है, क्योंकि यहां की वस्तुएँ सिन्धु घाटी सभ्यता के स्थलों से मिलती जुलती है। गणेश्वर के लोग मुख्यतः आखेट पर तथा आंशिक रूप से कृषि पर निर्भर थे। गणेश्वर संस्कृति, ताम्रयुगीन सांस्कृतिक केन्द्रो में से प्राप्त तिथियों में प्राचीनतम है। इसे भारत में 'ताम्रयुगीन सभ्यताओं की जननी' माना जा सकता है।

- **आहड**

ताम्र संस्कृति का प्रसिद्ध केन्द्र 'आहड़' आयड़/बेड़च नदी किनारे उदयपुर (राजस्थान) में स्थित है। सर्वप्रथम आहड़ में उत्खन्न का कार्य 1953 ई. में अक्षयकीर्ति व्यास के नेतृत्व में हुआ। इसके पश्चात् विस्तृत उत्खनन 1956 में रत्नचन्द्र अग्रवाल तथा 1961 ई में एच. डी. सांकलिया द्वारा किया गया।

शिलालेखों में आहड़ का प्राचीन नाम 'ताम्बवती–ताम्रवर्ती' अंकित है। 10वीं–11वीं शताब्दी में इसे 'आघाटपुर' नाम से जाना जाता है। आहड़ का काल 3000 ईसा पूर्व से 1500 ईसा उपकरण प्राप्त हुए है। आहड़ में काले एवं लाल रंग के मृदभाण्ड (ठसंबा ंदक त्मक ॅंतम) मिले है, जो ताम्रपाषाण काल की विशिष्ट शैली को दर्शाते है। यहां से अनाज रखने के मृदभाण्ड मिले है, जिन्हें स्थानीय भाषा में 'गौरे' व 'काले' कहा जाता था। अन्य समकालीन ताम्र संस्कृतियों के विपरीत यहाँ (आहड़) में सूक्ष्म पाषाण औजारों का इस्तेमाल नही होता था। आहड़ संस्कृति की सबसे मुख्य प्राप्ति 'टेराकोटा का बैल' है, जिसे 'बनासियन बुल' कहा गया है।

आहड़ संस्कृति के लोग मकान गीली मिट्टी (गारा) एवं पत्थर से बनाते थे तथा नींव में प्रायः पत्थरों का प्रयोग किया जाता था। आहड़ संस्कृति के केन्द्र मर्मी (चित्तौड़गढ़) से बडी संख्या में मवेशी, भैंस, कृष्णमृग, पीतल व मुर्गे की हड्डियों के साक्ष्य तथा ताजे पानी के दो तरह के कवच मिले है। आहड़ से 6 यूनानी ताम्र मुद्राएँ एवं 3 मुहरें मिली है, जिन पर एक तरफ त्रिशूल तथा दूसरी तरफ अपोलो देवता एवं यूनानी भाषा में लेख अंकित है। मुहरों पर 'बिहितभ विस', 'पलितसा' तथा 'तातीय तोम सन' लेख अंकित है। भारतीय उपमहाद्वीप में लोहे का प्राचीनतम साक्ष्य आहड़ संस्कृति की प्रमुख खाद्यान्न फसल चावल व बाजरा थी।

आहड़ कृषि तथा पशुपालन के साथ–साथ प्रारम्भिक शहरीकरण के संकेत देता है, जो प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल की और बढते समाज का प्रमाण है।

- **गिलूण्ड :–**

राजस्थान के राजसमन्द जिले में स्थित गिलूण्ड की खोज बी.बी. लाल ने की। गिलूण्ड आहड़–बनास संस्कृति का स्थानीय केन्द्र माना जाता है। यह एकमात्र ताम्रपाषाणिक स्थल है जहां से प्रस्तर फलक उद्योग के साथ मकानों के निर्माण में पक्की ईंटों के साक्ष्य मिले है। यहां से 'स्तम्भ गर्त' के प्रमाण भी मिले है। यहां से प्राप्त गोदामों के अवशेषों तथा बडे मृदभाण्ड यह संकेत देते है कि यह एक संगठित बस्ती थी।

गिलूण्ड में तांबे के औजारों के साथ–साथ पत्थर के उपकरणों का उपयोग जारी रहा, जो नवपाषाण से तामृपाषाण काल के मिश्रित प्रभाव को दर्शाता है। इस स्थल की विशेषता यह है कि यह हड़प्पा सभ्यता के समकालीन था, जिससे व्यापार और सांस्कृतिक आदान–प्रदान की सम्भावना प्रबल होती है।

- **बालाथल :–**

राजस्थान के उदयपुर जिले में स्थित बालाथल सभ्यता की खोज 1962–63 ई में वीन.एन. मिश्र ने की थी। इसका उत्खन्न वी. एन. मिश्र (पूना विश्वविद्यालय) ने 1993 ई. में करवाया। यहां से रेड स्लिप वेयर (लाल लेप मृदभाण्ड), बेर व यू आकार के चूल्हों के साक्ष्य मिले है। यहां से 11 कमरों से युक्त दुर्गनुमा भवन भी मिला है। योगी मुद्रा में शवाधान के साक्ष्य भी मिले है।

बालाथल से एक विशाल मिट्टी की दीवार द्वारा की गई घेरेबन्दी का प्रमाण भी मिला है। इस सुरक्षा दीवार में बुर्ज बनाये जाने का स्पष्ट प्रमाण उपलब्ध है। यहां से एक 4000 वर्ष पुराना कंकाल प्राप्त हुआ है, जिसे भारत में कुष्ठ रोग का प्राचीनतम प्रमाण माना जाता है। बालाथल के उत्खन्न में सांड की मूर्ति, पत्थर के मनके, पक्की मिट्टी की मूर्तियां, पशु आकृतियाँ, तांबे के औजार प्राप्त हुए है। तांबे के औजारों में चाकू, गंडासे, बाणों के अग्रभाग व तांबे की मुद्राएं (जिन पर हाथी व चन्द्रमा की आकृतियाँ है।) मिले है। यहां के उत्खन्न से प्राप्त मृदभाण्डों, तांबे के औजारों तथा मकानों पर सिन्धु घाटी सभ्यता का प्रभाव दिखायी देता है। जिससे सिन्धुवासियों से इनका सम्पर्क होने का अनुमान किया जाता है। यहां लोहे के औजार प्रचूर मात्रा में मिले है। यहां से 5 लोहा गलाने की भट्टियों के अवशेष मिले है।

बालाथल नवपाषाण काल की सादगी से ताम्रपाषाण काल की जटिलता की ओर बढ़ते समाज को दर्शाता है। यहां से हाथ से बुने कपड़ें का एक टुकडा भी मिला है। बालाथल में 1800 ईसा. पूर्व के लगभग ताम्रपाषाणिक सभ्यता तथा 600 ईसा पूर्व के लगभग लौहयुगीन सभ्यता आबाद होने के अनुमान है।

इन सभी स्थलों की विशेषता यह है कि इन्होनें नवपाषाण काल की कृषि तथा पशुपालन की परम्परा को आगे बढ़ाया साथ ही धातु विज्ञान एवं व्यापार के नये आयाम जोड़े। ताम्रपाषाण काल में राजस्थान के समुदायों ने तांबे के खनन, प्रसंस्करण तथा औजार निर्माण में महारत हासिल की, जो प्रारंभिक ऐतिहासिक काल के लिये आधार बना। इस सभ्यता में हमारे आर्वाचीन संस्कृति के अनेक परिपुष्ट आधार व पूर्वरूप के तत्व निहित थे।

प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल की ओर संक्रमण

प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल वह चरण है। जिसमें लिखित साक्ष्य और संगठित सामाजिक–राजनीतिक व्यवस्थाएँ उभरने लगी। भारत में यह काल वैदिक सभ्यता व हड़प्पा सभ्यता के पतन के बाद शुरू होना है। लगभग 1500 ईसा पूर्व) जब राजस्थान का मानव प्रागैतिहासिक युग से गुजर रहा था, उस युग के आदिम समाज की परिकल्पना करना बड़ा कठिन है। जैसा कि हमने पहले कहा, यहाँ का मानव इस युग के अन्य स्थलों के

मानव की भांति निरा बर्बर तथा गिरी गदारों का निवासी था। समूह में रहकर या संगठित होकर काम करने की प्रवृति उसमें जाग्रत नही हुयी थी। इसके अनन्तर आदि मानव आगे बढ़ा जिसमें छः लाख वर्ष से पांच हजार वर्ष की अवधि लग गई। इस लम्बे काल में, मानव बजाय कन्दराओं के सरस्वती–द्रषदूती, बेड़च– बनास, गम्भीरी, आहड आदि की घाटियों में रहने लगा। यहां रहकर वह धीरे–धीरे मकान बनाने, कृषि व पशुपालन करने, भाण्डों का निर्माण करने तथा चित्रों द्वारा अपनी भावनाओं को व्यक्त करने की कलाओं को जानने लगा। राजस्थान में इस प्रक्रिया में ताम्रपाषाण स्थलों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी–

- **तकनीकी प्रगति** :–

ताम्रपाषण काल में तांबे के औजारों का उपयोग नवपाषाण काल के पत्थर के औजारों की तुलना में अधिक प्रभावी था। गणेश्वर जैसे स्थलों से प्राप्त तांबे के हथियार तथा औजार यह दर्शाते है कि समाज शिकार, कृषि तथा सुरक्षा के लिये बेहतर तकनीक अपना रहा था। यदि इन उपकरणों की तुलना भारतीय अथवा पृथ्वी के अन्य प्राचीन स्थानों से प्राप्त उपकरणों से की जाये तो यह प्रमाणित होता है कि उस युग की आवश्यकता, विकासक्रम तथा प्राकृतिक वातावरण में सभी स्थलों में प्रायः समानता थी तथा मानव संस्कृति एक ही ढंग से उन्नति कर रही थी।

मेवाड़ में बागौर तथा मारवाड़ में तिलवाडा के उत्खनन से नवीन पाषाणकालीन तकनीकी उन्नति पर अच्छा प्रकाश पडा है। मानव अब केवल शिकार के उपकरणों तक ही सीमित नहीं रहा बल्कि उसका विस्तार कृषि सम्बन्धी औजारों में भी देखा गया है। ताम्रपाषाण काल में धातु विज्ञान का विकास हुआ और पत्थर के औजारों के साथ तांबे का इस्तेमाल होने लगा। ताम्रपाषाण काल की यह तकनीकी प्रगति प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल में लौह युग की और बढने का मार्ग प्रशस्त करती है।

- **सामाजिक संगठन** :–

आहड़ तथा बालाथल जैसे स्थलों से प्राप्त बस्तियों के अवशेष यह संकेत देते है कि ताम्रपाषाण काल में समुदाय बडे तथा अधिक संगठित हो रहे थे। दीवारों से घिरी बस्तियाँ, गोदाम, सामुदायिक संरचनाएँ, प्रारम्भिक शहरीकरण ये सब सामाजिक पदानुक्रम की ओर संकेत करती है।

आहड़ के एक स्थानीय स्थल केन्द्र धूलकोट की खुदाई से उन मकानों के सम्बन्ध में भी जानकारी होती है, जिनमें आहड सभ्यता के निवासी रहते थे। इन मकानों को बनाने में कंकरीट से मिली मिट्टी तथा पास में बहुतायत से मिलने वाला पत्थर, बांस एवं पेडों की डालियों का प्रयोग किया जाता था।

इस युग में समाज तथा संस्कृति में बदलाव आया तथा समाज निर्माण की प्रक्रिया की शुरूआत हुई। इस युग में मानव ने छोटे पैमाने पर शिल्प उत्पादन का भी अभ्यास किया था। इस काल के मानव के प्राकृतिक चुनौतियों को स्वीकार कर अपने अदम्य साहस का परिचय दिया। कबीले, समूह तथा संगठित वर्ग में रहने से इनमें दायित्व की भावना का उदय हुआ जो संस्कृति को समृद्ध तथा उत्कृष्ट बनाने में लाभप्रद सिद्ध हुई। संगठन प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल में राज्य व्यवस्था तथा प्रशासनिक ढांचे की नींव बना।

- **व्यापार और सांस्कृतिक आदान प्रदान :–**

गणेश्वर और गिलूण्ड जैसे स्थलों से प्राप्त वस्तुएँ हड़प्पा सभ्यता के व्यापारिक स्थलों से मिलती–जुलती है तथा व्यापारिक नेटवर्क का संकेती देती है। इसमें तांबा, मिट्टी के बर्तन तथा अन्य सामग्रियों का आदान–प्रदान होता था। आहड़ से तृतीय ईसा पूर्व तथा प्रथम व द्वितीय ईसा पूर्व की यूनानी मुद्राएँ मिली है। ये मुद्राएँ यहां कैसे आयी उसके लिये अधिकृत रूप से कुछ नही कहा जा सकता परन्तु इतना अनुमानित किया जा सकता है कि बनास नदी सभ्यता का प्रयार व अन्य नदियों के मार्ग का सम्बन्ध इतना विकसित था कि किसी प्रकार क्रय–विक्रय के दौरान ये मुद्राएँ यहां पहुंच गई हो अथवा तांबे के शिल्पी जो अन्य स्थानों से यहां आकर बस गये हो तथा वे अपने साथ इन मुद्राओं को लाये हो। इससे इतना तो अवश्य स्पष्ट है कि उस युग में राजस्थान का व्यापार विदेशी बाजारों से था। ताम्रपाषाण काल में लोग लम्बी दूरी से भी व्यापार करते थे। वे अपने समुदाय के बाहर के लोगों के साथ वस्तुओं का आदान–प्रदान करते थे। इस काल में व्यापार के लिये पहियेदार बैलगाडियों का इस्तेमाल किया जाता था। यह सांस्कृतिक और आर्थिक सम्पर्क प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल में वैदिक और महाजनपद सभ्यताओं के विकास में सहायक रहा।

- **आर्थिक आधार**

ताम्रपाषाण काल में कृषि और पशुपालन के साथ–साथ धातु आधारित अर्थव्यवस्था का विकास हुआ। इनके आर्थिक जीवन में मुख्यतः व्यापार, कृषि तथा पशुपालन के बारें में जानकारी मिलती है।

कृषि – ताम्रपाषाण काल के लगभग सभी स्थलों की अर्थव्यवस्था कृषि पर निर्भर थी। कुछ स्थलों पर अतिरिक्त उत्पादन के लिए विभिन्न तरह के उपायों का प्रयोग किया गया। वे इनकी मुख्य फसलें जो, गेहूं, बाजरा, चावल, मसूर, दाले तथा तिलहन थी। इस काल का मानव गोबर एकत्रित कर खेतों में खाद के रूप में प्रयोग कर अधिक फसल उगाने के उपाय करने लगा।

पशुपालन :– पशुओं को पालतू बनाये जाने की शुरूआत नवपाषाण काल में ही देखने को मिल जाती है, परन्तु इस काल में यह और भी व्यापक स्तर पर देखने को मिला। गाय, भेड, बकरी इत्यादि को पालतू बनाया जाने लगा तथा इनका प्रयोग दूध व मांस के लिये किया जाता था। बैल तथा ऊंट को भी पालने के प्रमाण मिलते है, जिनकी सहायता से कृषि की जाती थी। भारवाहक के रूप में भी बैंलों का प्रयोग दो तथा चार पहिये की ढकी हुई गाडियों में किया जने लगा।

व्यापार – ताम्रपाषाण काल में लगभग सभी स्थलों पर अतिरिक्त उत्पादन किया जाता था, जिसका मुख्य उद्देश्य व्यापार करना था। कीमती पत्थरों, धातुओं इत्यादि के आयात के लिये कृषि उपजों को दिया जाता था। जिसे ये जरूरत से अधिक पैदावार करते थे ताकि वस्तु विनिमय के आधार पर व्यापार में इन्हें प्रयुक्त किया जा सके। बैल गाडियों का प्रयोग व्यापार के लिये भी होता था।

बालाथल तथा आहड़ से प्राप्त अनाज भण्डारणं के साक्ष्य यह दर्शाते है कि अधिशेष उत्पादन शुरू हो गया था, जो प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल में व्यापार और शहरी केन्द्रों के उदय का आधार बना।

राजस्थान के ताम्रपाषाण स्थल हड़प्पा सभ्यता के समकालीन थे, फिर भी इनकी स्वतंत्र पहचान थी। ये स्थल हड़प्पा के पतन के बाद भी फलते–फूलते रहे तथा वैदिक काल की और बढते समाज का प्रतिनिधित्व करते

है। इस प्रकार ताम्रपाषाण काल ने नवपाषाण की नींव पर प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल की जटिल संरचनाओं को विकसित करने में मध्यस्थ की भूमिका निभायी।

निष्कर्ष

राजस्थान में नवपाषाण काल से प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल तक का संक्रमण एक सतत और क्रमिक प्रक्रिया थी, जिसमें ताम्रपाषाण स्थलों ने निर्णायक भूमिका निभायी। आहड़, गणेश्वर, गिलुण्ड तथा बालाथल जैसे स्थलों ने तकनीकी, नवाचार, सामाजिक संगठन, व्यापारिक नेटवर्क तथा आर्थिक प्रगति के माध्यम से इस परिवर्तन को सम्भव बनाया। ये स्थल नवपाषाण काल की स्थायी जीवनशैली को ताम्रपाषाण काल की धातु आधारित जटिलता तक ले गये तथा प्रारम्भिक ऐतिहासिक काल में संगठित सभ्यताओं की नींव रखी। ताम्रपाषाण काल के दौरान भारत में खोजी गयी पहली धातु तांबा थी। इस युग में तांबे के औजारों का इस्तेमाल शुरू हुआ तथा धातु विज्ञान का भी विकास हुआ। तांबे के औजार पत्थर के औजारों की तुलना में ज्यादा टिकाऊ तथा कुशल थे। तांबे के औजारों के आविष्कार के बाद कांस्य युग की शुरूआत हुई। ताम्रपाषाण काल, नवपाषाण काल के बाद तथा कांस्य युग से पहले था, अतः यह एक सतत सक्रमण काल के रूप में था। ताम्रपाषाण काल को पूर्व हड़प्पा चरण भी कहा जाता है। इस काल में ग्रामीण बस्तियाँ बसी तथा मवेशी पालन भी शुरू हो गया जो विकास की प्रक्रिया को दर्शाता है।

आहड़ तथा गिलूण्ड से तांबें की वस्तुएँ बहुतायत से मिली। आहड़ से सपाट कुल्हाडियाँ तथा चूडियां प्राप्त होती है जो सभी तांबे की है, हालांकि एक चादर कांसे की भी पायी गयी, जो इसकी विकास प्रक्रिया को इंगित करता है। गिलूण्ड से भी तांबे के टूकडें मिलते है तथा यहां से एक 'प्रस्तर फलक उद्योग' ('जवदम इसंकम पदकनेजतल) भी पाया गया है। गणेश्वर से हड़प्पा को तांबे की वस्तुएँ आपूर्ति करने के प्रमाण मिले है। गणेश्वर की सूक्ष्म पाषाण वस्तुओं तथा अन्य पाषाण उपकरणों को देखते हुए गणेश्वर संस्कृति 'प्राक् हड़प्पाई ताम्रपाषाण संस्कृति' कहा जा सकता है, जिसने परिपक्व हड़प्पा सभ्यता विकसित होने में योगदान दिया।

यह शोध दर्शाता है कि राजस्थान केवल एक भौगोलिक क्षेत्र नही, बल्कि मानव सभ्यता के विकास का एक जीवन्त केन्द्र था। भविष्य में इन स्थलों पर और अधिक उत्खनन तथा अध्ययन से इस संक्रमण काल की गहरी समझ विकसित हो सकती है।

संदर्भ सूची

1. मिश्रा, वी. एन. (1995). राजस्थान का प्रागैतिहासिक काल. राजस्थान साहित्य अकादमी.
2. शर्मा, डी. डी. (2005). चालकोलिथिक राजस्थानः अहर और बालाथल की खुदाई. भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण.
3. सिंह, आर. पी. (2010). प्राचीन राजस्थान में ताम्रपाषाण संस्कृति. हिमांशु प्रकाशन.
4. त्रिवेदी, एच. एन. (1998). भारतीय पुरातत्व और राजस्थान के ताम्रकालीन स्थल. प्रभात प्रकाशन.
5. मिश्रा, मधु बाला. (2008). राजस्थान की प्रागैतिहासिक संस्कृतियाँ. राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी.
6. अग्रवाल, डी. पी. (1984). भारत में ताम्र पाषाण संस्कृतियाँ. भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण.
7. जैन, के. सी. (1985). राजस्थान के ताम्रपाषाण युगीन स्थलों का अध्ययन. पुरातत्व, 15, 34–42.
8. शर्मा, ए. के. (2000). बालाथलः एक ताम्रकालीन स्थल की खुदाई रिपोर्ट. भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण रिपोर्ट, 22–30.

9. सक्सेना, पी. (2012). अहर संस्कृतिः राजस्थान में ताम्रपाषाण युग का विकास. इतिहास दर्पण, 7(1), 15–25.
10. मिश्रा, वी. एन. (1997). गणेश्वर–जोधपुरा संस्कृतिः राजस्थान में तांबे का प्रारंभिक उपयोग. पुरातत्व, 27, 15–25.
11. भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण. (2001). आहड़–गिलुंड उत्खनन रिपोर्ट (1999–2000).
12. राजस्थान पुरातत्व विभाग. (2015). राजस्थान के ताम्रपाषाण स्थलः एक पुनर्मूल्यांकन.